श्री अरविन्द का शिक्षा-दर्शन

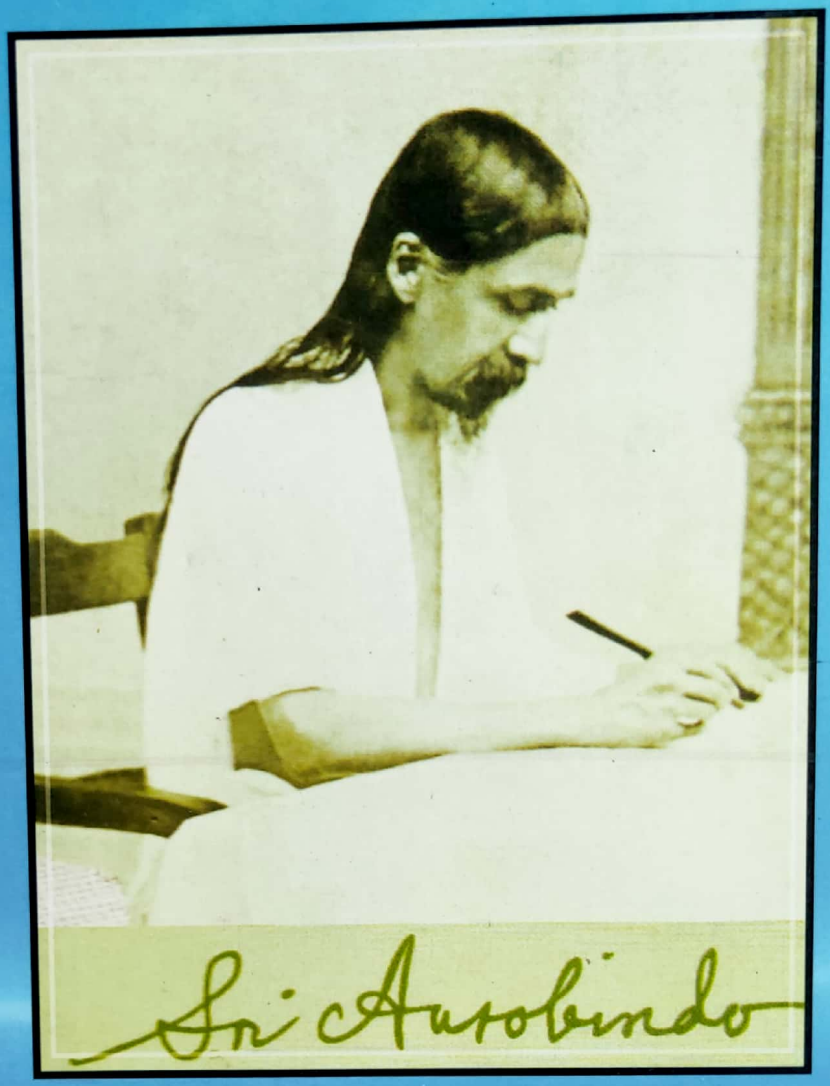

श्री अरविन्द अध्ययन केन्द्र

सोहन लाल डी० ए० वी० शिक्षण महाविद्यालय
अम्बाला शहर–134003 (हरियाणा)

Scanned by CamScanner

श्री अरविन्द का शिक्षा–दर्शन

लेखकगण

प्रो0 कृष्ण कुमार शर्मा

कु0 सरोज सोबती

श्री रमेश कुमार परूवा

अनुवादक

डा0 सुरेश चन्द्र

देशराज सिरसवाल

श्री अरविन्द अध्ययन केन्द्र

सोहन लाल डी० ए० वी० शिक्षण महाविद्यालय

अम्बाला शहर (हरियाणा)

(2010)

Scanned by CamScanner

प्रथम हिन्दी संस्करण : 2010
© श्री अरविन्द अध्ययन केन्द्र,
सोहन लाल डी० ए० वी० शिक्षण महाविद्यालय
अम्बाला शहर – 134003
(हरियाणा)

प्रकाशन एवं मुद्रण :
सोहन लाल डी० ए० वी० शिक्षण महाविद्यालय
अम्बाला शहर

Website: www.sldaveducation.org
http://csassldav.webs.com
E-mail: sldaveducation@gmail.com
Phone: 0171-2444437, 2446584
Fax : 0171-2446584

Scanned by CamScanner

दो शब्द

शिक्षा समाज के विकास का सबसे महत्वपूर्ण कारक है। वर्तमान समय में शिक्षा अपना वास्तविक उद्देश्य अर्थात् चिन्तनशील एवं प्रगतिशील समाज की संरचना को खो चुकी है। किसी भी देश में लोकतन्त्र, सामाजिक न्याय, सभी को समान अवसर, धर्म–निरपेक्षता और समाज कल्याण इत्यादि मूल्यों का होना अति आवश्यक है, तभी समाज–विकास की बात की जा सकती है। आजकल शिक्षा की जैसी अवधारणा है वह हमारे शारीरिक और सामाजिक जीवन दोनों से ही पृथक है क्योंकि यह शिक्षा मूल्यों के अध्ययन से वंचित है। ऐसे में उन महान पुरूषों की प्रासंगिकता भी नजर आती है, जो इन मूल्यों के लिए जिन्दगी भर संघर्ष करते रहते हैं। श्री अरविन्द का शिक्षा दर्शन व्यक्ति और समाज के सम्पूर्ण विकास की रूपरेखा हमारे सामने रखता है। शिक्षा सम्बन्धी उनके विचार तत्कालीन सामाजिक एवं राजनीतिक परिवेश में अति महत्त्वपूर्ण हैं।

सोहन लाल डी. ए. वी. शिक्षण महाविद्यालय, अम्बाला शहर में स्थित तथा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा मान्यता प्राप्त 'श्री अरविन्द अध्ययन केन्द्र' महान विचारक एवं शिक्षा शास्त्री श्री अरविन्द के विचारों के प्रचार–प्रसार में सराहनीय भूमिका निभा रहा है। Sri Aurobindo's Educational Philosophy नामक पुस्तक का प्रस्तुत हिन्दी अनुवाद पाठकों के निमित प्रस्तुत है। अनुवाद श्रृंखला की यह दूसरी कड़ी है, जिसमें श्री अरविन्द के दार्शनिक सिद्धांतों के साथ–साथ उनके शिक्षा–दर्शन के विभिन्न पहलुओं पर ध्यान केन्द्रित किया गया है। प्रो. के. के. शर्मा व अन्य सभी साथी, जो इस कार्य से जुड़े हैं, बधाई के पात्र हैं, तथा जिनके प्रयास से यह पुस्तक साधारण भाषा में पाठकों के अध्ययनार्थ प्रस्तुत है।

आशा है कि प्रस्तुत पुस्तक श्री अरविन्द के विचारों को हर वर्ग तक पहुँचाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायेगी।

दिनांक: 15 मई, 2010

डॉ. विवेक कोहली
प्राचार्य
सोहन लाल डी. ए. वी. शिक्षण महाविद्यालय
अम्बाला शहर

Scanned by CamScanner

प्रस्तावना

हमारे जीवन में जटिलताएँ और समस्याएँ दिन–प्रतिदिन विस्तृत होती एवं उग्र रूप धारण करती जा रही हैं। अत: शिक्षा के सिद्धांतों, मनोवैज्ञानिक समझ और जीवन के उद्देश्यों को पुनर्जीवित किए जाने की जरूरत है।

आदर्श समाज में गुणवान व्यक्ति का होना अति प्राचीन काल से तत्त्व–दृष्टाओं, सन्तों, विचारकों और रहस्यवादियों का स्वप्न रहा है। आधुनिक समय में, श्री अरविन्द ही ऐसे महान दार्शनिक हैं जो शिक्षा प्रणाली को नए विचार और नई दिशा प्रदान कर सकते हैं। श्री अरविन्द का दर्शन उनकी अपनी अन्तर्दृष्टि और अनुभवों का परिणाम है। उनका व्यक्तिगत दर्शन आदर्शवाद, व्यवहारिकतावाद, यथार्थवाद, रहस्यवाद और अनेकों वादों या सिद्धान्तों (ism) का सम्मिश्रण है। इस कारण श्री अरविन्द स्वयं अपने दर्शन को 'समग्र' कहते है।

श्री अरविन्द दर्शन का वर्णन जो यहाँ इस पुस्तक में प्रस्तुत किया गया है, मुख्य तौर से डिवाईनलाईफ, एसेजऑनगॉड, दमदर तथा दूसरी महान कृतियों पर आधारित है।

प्रस्तुत पुस्तक श्री अरविन्द के दर्शन का संक्षिप्त विवरण और इसके साथ ही 21वीं सदी के भारत में इसके शैक्षिक निहितार्थो को प्रस्तुत करने का प्रयत्न मात्र है।

स्वाभाविक रूप से अध्ययन सामग्री के निर्माण का परिश्रम तभी सार्थक होगा जब पाठकों की हाजिर–जवाबी और ज्ञान–शक्ति प्रश्नों के माध्यम से निकल कर सामने आएगी।

यह पुस्तक आमतौर से उन पाठकों के लिए लिखी गई है जिनमें दर्शन के लिए प्रेम है और ऐसे विद्यार्थी जो श्री अरविन्द के सर्टिफिकेट कोर्स से जुडे हुए हैं। श्री अरविन्द के दर्शन के विषय में और सृजनात्मक भारतीय शिक्षा के निर्माण के लिए समीक्षात्मक सोच को विकसित करने में तथा पाठकों में रूचि उत्पन्न करने में, अगर यह पुस्तक सहायक होती है तो हम समझेगें कि केन्द्र का प्रयास सफल रहा है।

प्रो0 के0के0 शर्मा

प्रोग्राम–डायरेक्टर

Scanned by CamScanner

श्री अरविन्द का शिक्षा–दर्शन

प्रथम अध्ययन: अरविन्द का दर्शन — पृष्ठ संख्या

(क) तत्व मीमांसा — 9–15

(i) जड़तत्त्व और आत्म तत्त्व
(ii) सत्
(iii) निरपेक्ष सत्
(iv) ईश्वर
(v) श्री माँ
(vi) कर्म और पुनर्जन्म

(ख) ज्ञान मीमांसा

(i) ज्ञान
(ii) अज्ञान
(iii) अज्ञान के सात प्रकार
(iv) अवतरण और विकास

(ग) मूल्य मीमांसा

द्वितीय अध्याय: अरविन्द का शिक्षा–दर्शन — 16–19

(i) शिक्षा की अवधारणा
(ii) शिक्षा दर्शन के मूल सिद्धांन्त
(iii) शिक्षा के उद्देश्य
(iv) पाठ्यक्रम
(v) शिक्षण की पद्धतियाँ
(vi) शिष्य की भूमिका
(vii) शिक्षक का योगदान
(viii) स्वतन्त्रता एवं अनुशासन

सारांश — 20
स्वपरिक्षणीय प्रश्न — 21
सन्दर्भ–ग्रन्थ सूची — 22

Scanned by CamScanner

प्रथम अध्याय

श्री अरविन्द का दर्शन

''ज्ञान के अनेक प्रकार के साधनों द्वारा प्रदत्त समग्र आंकड़ों का संग्रह कर, उन्हें संश्लेष्णात्मक सम्बन्धों के माध्यम से एक सत्, परम सत् और सार्वभौम सत् के रूप में स्थापित करना, दर्शन का कार्य है।'

–श्री अरविन्द

अधिकांश व्यक्तियों के लिए दर्शन का अर्थ ऐसे अनेक दार्शनिक सिद्धान्तों अथवा वैचारिक पद्धतियों से है जो दर्शन के आदिकाल में प्रतीत हुए और महान् दार्शनिकों के नामों के साथ जुड़ गए। उन व्यक्तियों तथा उनके विचारों के बिना दर्शन इतना सुदृढ़ नहीं हो पाता, जितना की आज है। जब वे दर्शन के बारे में चिंतन करते है तो प्रकृति और मनुष्य से सम्बधित कुछ विशेष पदों और सिद्धांतों पर विचार करते है; जिन्हें वे बहुत महत्वपूर्ण मानते हैं तथा सम्पूर्ण दर्शन का अध्ययन इन्हीं के इर्द–गिर्द घूमता है। दर्शन और जीवन को सहचर समझा जाता है परन्तु पाश्चात्य दर्शन के प्रभाव से, इसका क्षेत्र बहुआयामी हो गया है। आत्मा, ईश्वर, परम सत्, विश्व की सृष्टि एवं उसका विकास, सत्य, नैतिक आचरण, सौन्दर्य अनुभव और तार्किक चिन्तन इत्यादि विचार इनके अन्तर्गत आते हैं।

संक्षेप में, दर्शन मानवीय समस्याओं को बौद्धिक, निष्पक्ष एवं प्रायोगिक विधि से सुलझा कर तथा एक विशेष सन्दर्भ या वैश्विक दृष्टिकोण देने तथा निश्चित निष्कर्षों एवं परिणामों तक पहुँचने की पद्धति एवं प्रक्रिया है।

इसी कारण, श्री अरविन्द का नाम आधुनिक युग के महानतम दार्शनिकों में सम्मान के साथ लिया जाता है – एक ऐसे दार्शनिक, जो अपनी अद्‌भुत शक्ति से आच्छादित विश्वदृष्टि, वैषम्यपूर्ण गम्भीरता तथा व्यापकता से विस्मित करने वाले हैं। यद्यपि वे कोई व्यवसायिक या अकादमिक दार्शनिक नहीं थे; वह एक योगी थे और संयोगवंश ही उनके कदम दर्शन के क्षेत्र में आगे बढ़ने लगे। दार्शनिक पत्रिका 'आर्य' में श्री अरविन्द, दिलीप कुमार रॉय को लिखे पत्र के माध्यम से उन परिस्थितियों का वर्णन करते है जिनके कारण वे दर्शन के विषय में लिखने के लिए बाध्य हुए।

"दर्शनशास्त्र, मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि मैं एक दार्शनिक नहीं था – यद्यपि मैंने दर्शन पर लिखा है. मेरे योग करने और पाँडिचेरी आने से पहले – मैं दर्शन के विषय में बहुत कम जानता था। मैं एक दार्शनिक नहीं वरन् कवि और राजनीतिज्ञ था, मैंने यह सब क्यों और कैसे किया? सर्वप्रथम क्योंकि पॉल रिचर्ड ने मुझे दार्शनिक पुर्नावलोकन में सहयोग करने की अपील की – और मेरा ऐसा मत था कि योगी को हर किसी क्षेत्र में आजमाईश करनी चाहिए। मैं उन्हें अच्छे से मना नहीं कर सका और उन्हें युद्ध के लिए जाना पड़ा और मुझे असहाय अवस्था में छोड़ गए और अकेले ही मुझे दर्शन पर चौंसठ पृष्ठ एक महीने में लिखने पड़े। दूसरे, जब मैंने बौद्धिक नियमों के विषय में लिखा तो जो कुछ मैंने हासिल किया तथा दैनिक योगाभ्यास से जाना, दर्शन उसमें स्वत: ही था।"

Scanned by CamScanner

श्री अरविन्द को दार्शनिक केवल तभी कहा जा सकता है जब इस पद का प्रयोग उस वास्तविक अर्थात 'ज्ञान का प्रेमी' के अर्थ में किया जाए। उनकी पुस्तक 'दिव्य जीवन' और दूसरी कृतियों में भी, उन्होंने दर्शन के सभी महत्वपूर्ण मुद्दों पर सम्पूर्णता से विचार मंथन किया; परन्तु उनके दर्शन का प्रारम्भिक उद्देश्य 'अपने आध्यात्मिक अनुभवों की बौद्धिक व्याख्या' का प्रस्तुतिकरण करना था। आइए श्री अरविन्द के विचारों अथवा दर्शन के विभिन्न पहलुओं पर उनके विचारों का अवलोकन करें।

(क) तत्त्वमीमांसा (सत् का स्वरूप)

अरस्तु का विचार है कि तत्त्वमीमांसा का अध्ययन भौतिकी के पश्चात् ही करना चाहिए। शब्दिक व्युत्पत्ति के अनुसार तत्त्वमीमांसा का अर्थ है – "भौतिकी से परे" अथवा "भौतिकी के पश्चात्"। यह आद्य विज्ञान अर्थात् विज्ञानों का विज्ञान है। यह प्रथम विज्ञान अर्थात् सब विज्ञानों की जननी भी है। वह इसे अस्तित्त्व (Being) का विज्ञान भी कहते हैं यद्यपि ऐसा विज्ञान असम्भव है जो केवल दृश्यमान प्रकिया के साथ ही सम्बन्ध रखता है। दर्शन अस्तित्व (Being) के साथ–साथ परिणति (Becoming) को भी प्रतिपादित करता है। आइए श्री अरविन्द के तत्वमीमांसीय विचारों पर संक्षिप्त दृष्टिपात करें।

(i) जड़तत्त्व और आत्मतत्त्व (Matter & Spirit)

श्री अरविन्द के अनुसार तत्त्वमीमांसा की समस्त संरचना का मूल आधार इस पर आश्रित है कि जैसे जड़तत्त्व वास्तविक है वैसे ही आत्मतत्त्व भी वास्तविक है। दोनों का किन्हीं परिस्थितियों में निषेध नहीं हो सकता। जो दर्शन जड़तत्त्व का निषेध करता है वह उतना ही संकुचित दृष्टि वाला है जितना कि भौतिकवादी दर्शन, जो आत्मतत्त्व का निषेध करता है। श्री अरविन्द के अनुसार 'जड़तत्त्व' और 'आत्मतत्त्व' दोनों एक ही सत् के दो पक्ष है। वह सत् को समन्वित करने का प्रयास इस प्रकार करते है जिसमें जड़तत्त्व और आत्मतत्त्व दोनों उचित स्थान प्राप्त कर सकें।

(ii) सत् (Reality)

'जड़तत्त्व' और 'आत्मतत्त्व' के बीच समन्वय ही श्री अरविन्द की तत्त्वमीमांसा का मूल सिद्धान्त है। वह सत् को अनिवार्य रूप से आध्यात्मिक ही मानते हैं परन्तु वे इसमें जड़तत्त्व की जगह को भी निश्चित करते हैं। उनके द्वारा वर्णित सत् का स्वरूप सत्ता के विभिन्न स्तरों या आठ सिद्धांतों से मिलकर बना है। इसका मतलब यह नहीं है कि सत् बहुआयामी है या सत् अनिवार्यतः एक है। सत्ता के विभिन्न स्तर विकास की दृष्टि से सत् को ही अभिव्यक्त करते हैं।

श्री अरविन्द द्वारा सुझाए गए आठ सिद्धांतों या सत्ता के विभिन्न स्तर (Cords of Being) इस प्रकार है:–

1 शुद्ध सत् (Existence)
2 चित् शक्ति (Consciousness force)
3 आनन्द (Bliss)
4 अतिमानस (Supermind)
5 मानस (Mind)

Scanned by CamScanner

6 मन (Psyche)

7 प्राण (Life)

8 जड़तत्त्व (Matter)

प्रथम चार उच्चतर गोलार्द्ध से सम्बन्धित है और अन्तिम चार निम्नतर गोलार्द्ध से। निम्नतर गोलार्द्ध उन्हीं स्तरों को प्रस्तुत करता है जो विकास प्रक्रिया के क्रम में पहुँच चुके है और उच्चतर गोलार्द्ध में वे स्तर शामिल है जिनका विकास प्रकिया में पहुँचना अभी बाकी है; परन्तु वे एक – दूसरे के विपरित नहीं होते। इस प्रकार मानस, अतिमानस की शक्ति के अधीन; मन, मानस की शक्ति में; प्राण चित्शक्ति के अंतर्गत तथा जड़तत्त्व शुद्ध सत् के प्रभाव में ही छिपा होता है। इस प्रकार सत् को व्याख्यायित करने का सबसे उचित तरीका उसे सत् (Existance), चित् (Consciousnes) और आनन्द (Bliss); यथा "सच्चिदानन्द" के त्रियक सिद्धान्त के रूप में वर्णन करना है।

श्री अरविन्द तीनों वेदान्तिक पदों की व्याख्या अद्वितीय तरीके से करते हैं। ये सर्वोच्च सत् की तीन उपाधियाँ है। परम सत्, शुद्ध सत् (Pure existence) की भान्ति मूलभूत सत् है। चित् शक्ति (Consciousness force) शुद्ध सत् में अन्तर्निहित होती है तथा शक्ति संचालन की यह विधि समस्त सृष्टि निर्माण का मूल है; यह जननी है; दिव्य शक्ति है। जब तक कि उसमें ईश्वर द्वारा, जो कुछ देखा जाए, स्थिति में परिवर्तन न कर दिया जाए और आनन्द के बीज न डाल दिये जाए, तब तक वह कोई आकार नहीं ग्रहण कर सकती। आनन्द (Biliss) समस्त सृजन शक्ति की कार्य योजना एवं विश्व आश्रय की कुँजी (Key) है। विश्व का अस्तित्व शिव के भावपूर्ण नृत्य की अभिव्यक्ति है। इसका मुख्य उद्देश्य नृत्य का आनन्द प्राप्त करना है।

(iii) निरपेक्ष सत् (The Absolute)

श्री अरविन्द के अनुसार निरपेक्ष सत् सच्चिदानन्द है जो कि सत्, चित् और आनन्द है। यह त्रिपद के साथ एक है। इसमें ये तीन, तीन न होकर एक ही है। श्री अरविन्द के तत्वमीमांसा में निरपेक्ष सत् के अस्तित्व के साथ उसकी सम्भाव्यता का भाव भी मौजूद है। यह अनिवार्य रूप से समस्त जीव–जगत का आधार है। इसका मेल अपरिमित रूप से बहुआयामी एवं गुणात्मक है। यह त्रियेक मेल है अर्थात् त्रियेकता में एकता। श्री अरविन्द के अनुसार इसके तीन पहलू है:–

(अ) यह जीव–जगत और सभी वस्तुओं में व्याप्त आत्म और आत्म प्रत्यक्ष की स्पष्ट अभिव्यक्ति है।

(ब) हमारे अन्दर व्याप्त सत्ता आत्मतत्त्व और जड़तत्त्व के रूप में विद्यमान हैं जिसकी हम अनुपालना करते हैं और जिसकी 'इच्छा' के अनुरूप हम अपनी प्रतिक्रियाओं को अभिव्यक्त करना सीखते हैं ताकि हम विकसित हों और अन्धकार को प्रकाश से दूर कर सकें।

(स) दिव्य सत्ता (सत् भाव व अध्यात्म, सर्वानन्द एवं प्रकाश, दिव्य ज्ञान और शक्ति आदि) लोकातीत है। सर्वोत्तम सत्ता और उसके प्रकाश की तरफ हम विकास की और उन्मुख हो और इसकी सत्ता को अपनी चेतना और जीवन में अधिकाधिक अवतरित करें।

(iv) ईश्वर (God)

श्री अरविन्द के अनुसार ईश्वर और निरपेक्ष सत्त् समान्यता एक हैं तथा समान सत्ता के प्रतिरूप हैं।

Scanned by CamScanner

परमात्मा सर्वव्यापक, त्रिकालदर्शी और सर्वशक्तिमान है। वह अन्तस्थ (Immanent) और लोकातीत (Trancendent), वैयक्तिक (Individual) और सार्वभौमिक (Universal) है। वह समस्त वस्तुओं का सृष्टा, पालक एवं संहारक है। वह सहायक, पथ – प्रदर्शक, अति–प्रिय व सबको प्रेम करने वाला है। वह समस्त प्राणियों की अन्तर्तात्मा है। वह असीम, पूर्ण व नित्य है। वह सत् (Being) भी है और सम्भवन (Becoming) भी। वह विश्व का निमित व उपादान, प्रथम कारण और अन्तिम कारण है। ईश्वर विषय भी है और विषयी भी। वह भक्ति, प्रेम और आध्यात्मिक एकता का विषय है। वह सत्यशीलता, दयाभाव, ज्ञान, आनन्द जैसे गुण प्रदान करने वाला तथा दुःख, बुराई, संघर्ष, अज्ञानता, सीमितता आदि से मुक्ति देने वाला है। ईश्वर परा–पुरूष, परम स्व–चेतन पुरूष है।

(v) श्रीमाँ (The Mother)

श्री अरविन्द सच्चिदानन्द की चेतन– शक्ति को श्रीमाँ (The Mother) कहते हैं जैसा कि शक्ति एवं तंत्र दर्शनों में प्रतिपादित हुआ है। इस शक्ति की चार प्रमुख शक्तियों को श्री अरविन्द श्रीमाँ के चार रूपों में वर्णित करते है यथा :– महेश्वरी, महाकाली, महालक्ष्मी और महासरस्वती। जैसा कि वह कहते हैं ''महेश्वरी विश्व शक्ति के बृहत रूप का निर्माण करती है। महाकाली इसकी ऊर्जा तथा आवेग का संचालन करती है; महालक्ष्मी उनके सामन्जस्य और सीमा को निर्धारित करती है; किन्तु महासरस्वती इसकी व्यवस्था और कार्यान्वयन, विभागों में सम्बन्ध और शक्तियों के प्रभावकारी सामन्जस्य तथा परिणामों के अक्षय स्टीकपन तथा पूर्णता से संचालित करती है।' इन चार श्रेष्ठ शक्तियों के अलावा, श्रीमाँ की और भी असँख्य शक्तियाँ हैं।

श्रीमाँ अपनी शक्तियों के माध्यम से सृष्टि का निर्माण करती है और इसे परम सत् से जोड़ती है। वैयक्तिक, सार्वभौमिक और उत्कृष्ठ के रूप में त्रि–संतुलन का मेल वह व्यक्ति, प्रकृति और ईश्वर के साथ कराती है। श्रीमाँ न केवल शासन करती है अपितु वह सृष्टि निर्माण में सहायता एवं मार्गदर्शन भी करती है। श्रीमाँ की अवधारणा के परिप्रेक्ष्य में, श्री अरविन्द अनुग्रह के सिद्धान्त को कार्यरूप प्रदान करते हैं।

(vi) कर्म और पुर्नजन्म (Karma & Rebirth)

विकासवाद के सिद्धान्त की भान्ति, श्री अरविन्द का कर्मवाद और पुर्नजन्म का सिद्धान्त भी विकास में निरन्तरता के सिद्धान्त पर आधारित है। न केवल कर्म बल्कि विचार एवं भावनाएँ भी अपने प्रभाव और परिणाम से सामन्जस्य रखते हैं। कर्म का नियम, आत्मा की स्वतन्त्रता में बाध्यकारी नहीं है। वह इनके विकास का एक यन्त्र मात्र है। अतः पुनर्जन्म, कर्मवाद के सिद्धान्त द्वारा नियन्त्रित नहीं है अपितु आत्मा के अपने स्वभाव द्वारा निर्धारित हैं। इसका न कोई अन्त है और न ही निश्चित तौर पर आरम्भ। यह आध्यात्मिक विकास को सम्पन्न करने के लिए एक अत्यावश्यक साधन हैं। जीवन सतत् क्रम की विश्वनिहित एक प्रक्रिया है, जिसका उत्तरोत्तर क्रम में विकास द्वारा किया जाता है।

Scanned by CamScanner

(ख) ज्ञानमीमांसा (ज्ञान का स्वरूप)

सम्पूर्ण ज्ञान और सत्य समस्त दर्शनों का एक चिरस्थायी अन्वेषण है। ज्ञान सत् (Reality) को समझने की प्रयास हैं। सत्यता निर्णय की विशेषता है। निर्णय, ज्ञान पर आधारित सत्य है, जबकी अज्ञान भ्रम को बढ़ावा देता है। इसलिए ज्ञान और सत्यता, अज्ञान तथा भ्रम परस्पर अन्योन्याश्रित हैं। उपरोक्त तथ्यों के बीच अन्तर, दर्शन के स्वरूप पर दूरगामी महत्व को दर्शाता है। ज्ञान की अवधारणा और अज्ञान से इसका सम्बन्ध द्वारा ही आत्म के स्वरूप, जगत् और ईश्वर इत्यादि का निर्धारण होता है।

(i) ज्ञान (Knowledge)

श्री अरविन्द के अनुसार, 'ज्ञान सत्' की समग्र चेतना और इसकी पूर्णता का भाव है। जो सृजित नहीं होता अपितु जिसे खोजा जाता है। यह कोई क्रिया–कलाप नहीं अपितु स्वयं में एक सत्य है। यह ब्रह्म के समान एक, शाश्वत एवं अपरिमित है। यह मनुष्य की आध्यात्मिक चेतना की परिपूर्णता है। यह न केवल मानसिक प्रक्रिया है अपितु समस्त प्राणियों की शारीरिक, जैविक, मानसिक का तत्व है और अन्ततः यह आध्यात्मिक प्रक्रिया है। अतः ज्ञान अखण्डनीय है, जिसमें उच्चतम एवं निम्नतम सभी मध्याश्रित कड़ियों द्वारा जुडते हैं। पूर्णज्ञान में आत्म सिद्धि के लिए निम्नलिखित तीन उपाय हैं:–

- गुप्त आत्मिक सत्ता की खोज
- समस्त जीवों में स्वानुभूति को महसूस करना
- उस दिव्य सत्ता को जानना, जो सर्वोच्च लोकातीत आत्मा, ब्रह्माण्डीय सत्ता का आधार और स्वयं में दिव्य है।

(ii) अज्ञान (Ignorance)

श्री अरविन्द के दर्शन में अज्ञानता की अवधारणा महत्वपूर्ण स्थान रखती है, उनका विश्वास है कि ज्ञान के स्वरूप को समझने का कोई भी प्रयत्न अज्ञान के विभिन्न आयामों को समझते हुए होना चाहिए। अज्ञान का अर्थ ज्ञान का अभाव नहीं है। इसके दो सर्वाधिक महत्वपूर्ण बिन्दु हैं ''जिनमें पहला ज्ञान का पूर्णतया अभाव तथा दूसरा पूर्णज्ञान की अवस्था है'' और दोनों के बीच ''अज्ञान का क्षेत्र है'' जो कि, ज्ञान के अभाव से ज्ञान की तरफ सदैव गतिमान रहता है।

सामान्यतया ऐसा माना जाता है कि अज्ञान, ज्ञान का विपरीतार्थक है; मनुष्य के बन्धन और दुःखों का कारण है। किन्तु श्री अरविन्द इस मत को स्वीकार नहीं करते। वे अंशतः इसे ज्ञान के समकक्ष समझते हैं। ज्ञान निश्चित मात्रा में हमेशा विद्यमान रहता है। श्री अरविन्द ऐसा मानते है कि पूर्ण ज्ञान ही परम सत् का ज्ञान है।

(iii) अज्ञान के सात प्रकार (Seven Fold Ignorance)

श्री अरविन्द के अनुसार अज्ञान के सात भेद है :–

(i) आद्य अज्ञान (Original Ignorance) में, मनुष्य परम सत् के सत्य स्वरूप को भुला देता है और भाव या सम्भवन पर पूर्ण सत् के रूप में अपना ध्यान केन्द्रित कर लेता है। यह मूल अज्ञान, पूर्व और पश्चिम में तत्त्वमीमांसीय सिद्धान्तों का मुख्य आधार है।

(b) ऐहिक अज्ञान (Cosmic Ignorance) में मनुष्य जगत् में होने वाली घटनाओं को ही सत्य मान लेता है

Scanned by CamScanner

और इसके पीछे काम करने वाली शक्ति को भूल जाता है। यह दर्शन, कला, साहित्य एवं ज्ञान के अन्य क्षेत्रों में, भौतिकवादी, जीवात्मवादी तथा रोमांसवादी सिद्धान्त है।

(c) तीसरा अहम् कृत अज्ञान (Egoistic Ignorance) है; इसमें मनुष्य स्वयं को 'अंहकार' के साथ परिभाषित करता है और इसकी वास्तविक सार्वभौमिक प्रकृति भूल जाता है। आधुनिक समाज में यह अज्ञान सामाजिक सम्बन्धों तथा मनुष्य के वैयक्तिक जीवन में कार्य कर रहा है। यह वह अज्ञान है जो शिक्षा दर्शन के उन्मूलन का प्रयत्न करता है।

(d) चौथा लौकिक अज्ञान (Temporal Ignorance) है जो मनुष्य को उसके तात्कालिक जीवन काल सम्पूर्ण समझता है तथा स्वयं के अमरत्व को भुला देता है। वर्तमान समाज में, यह अज्ञान, परिणाम के साथ ही भौतिकवाद के उभरने का कारण भी है।

(e) पाँचवां मनोवैज्ञानिक अज्ञान (Psychological Ignorance) है जो मनुष्य की सतही प्रकृति (surface nature) पर सोचता है और चेतना के निम्न एवं उच्च स्तरों को भुला देता है। विशेषतया यह अज्ञान तात्कालिक मनोविज्ञान और शैक्षिक सिद्धान्तों का आधार बनता है।

(f) ये सभी छठे प्रकार के अज्ञान को प्रभावित करते हैं। संगठनात्मक अज्ञान (Constitutional Ignorance)वह अज्ञान है जिसमें मनुष्य अपने पूर्णसत् की वास्तविक प्रकृति को भुला देता है और शरीर, जीवन या मन या इनमें से कोई दो को सम्पूर्ण मनुष्य के रूप में मान लेता है।

(g) ये सभी छः प्रकार के अज्ञान, सातवें का मार्ग प्रशस्त करते हैं व्यावहारिक अज्ञान (Practical Ignorance) वह है जो सभी भ्रमों अथवा दोषों, बुराईयों, गलत फहमियों तथा विश्व में व्याप्त दुःखों व्यक्ति और समाज के लिए उत्तरदायी है। यह शिक्षा सम्बन्धी सभी समस्याओं का मूल है।

इन सातों प्रकार के अज्ञानों से विमुक्त होने के लिए हमें पूर्णज्ञान के मार्ग का अनुसरण करना चाहिए। मनुष्य का परम सत् के सत्य स्वरूप, जगत्, आत्म्, आत्म् परिणति, चेतना का स्वरूप और ऊपर वर्णित हमारे विचारों का वास्तविक प्रयोग, इच्छा और कर्म को अनिवार्य तौर पर जानना चाहिए। इस प्रकार हम कह सकते है कि पूर्ण ज्ञान, सत्य और आध्यात्मिकता के वास्तविक जगत् में मानव के रूपान्तरण के लिए अत्यन्त अनिवार्य है।

(iv) अवतरण एवं विकास (Involution & Evolution)

श्री अरविन्द के अनुसार, समस्त सृष्टि को अवतरण व विकास के सम्बन्ध के माध्यम से समझा जा सकता है। सृष्टि को दोहरी प्रक्रिया माना गया है; पहला वैश्विक आकारों में आत्मा का अवतरण तथा दूसरा, विश्व रूपों का उच्च स्तरीय विकास। अवरोहण की प्रक्रिया ही अवतरण (Involution) की प्रक्रिया कहलाती है तथा प्रत्येक स्थान पर विकास अवतरण से ही पूर्व कल्पित है। विश्व में मूलतत्त्व (spirit) के अवतरण के बिना संसार का अध्यात्म के क्षेत्र में कोई विकास नहीं हो सकता। श्री अरविन्द के अनुसार अवतरण क्रमशः सत्, चेतन–शक्ति, आनन्द, अतिमानस, मानस, चित्, जीवन और जड़तत्त्व के रूप में होता है।

इस प्रकार विकास–क्रम में जड़तत्त्व, जीवन, मनस्, चित्, अतिमानस, आनन्द, चेतना शक्ति और सत् आदि होने चाहिएँ। विश्व का विकास क्रमशः जड़तत्त्व, जीवन और मनस् आदि चार अवस्थाओं से होकर

Scanned by CamScanner

गुजरता है। श्री अरविन्द यह विश्वासपूर्वक कहते हैं कि अब समय आ गया है जब विकास को अनिवार्य रूप से अतिमानस की उच्चतम अवस्था तक होना चाहिए। ऐसा होने पर, सम्पूर्ण जगत् का पूर्ण परिवर्तन अवश्य होता है अथवा हम कह सकते हैं कि विकास अतिमानस की अवस्था पर ही नहीं रूक जाता अपितु इससे आगे परमानन्द की उच्चतम अवस्थाएँ, चेतन–शक्ति और शुद्ध सत्ता भी होती हैं। इस दृष्टि से, विकास की प्रक्रिया मानसिक स्तर तक और अज्ञान के माध्यम से विकसित होती है। अतिमानस के अवतरण के पश्चात् विकास ज्ञान के माध्यम से उन्नत होगा। जिसके परिणाम स्वरूप मानव जो अज्ञान से आच्छादित होता है, वह ज्ञान से पूर्ण सत् में रूपान्तरित होता है। उनकी न कोई इच्छा, न कामना होगी और न ही किसी वस्तु के लिए प्रयासरत होंगे। उनके लिए अज्ञेय की खोज नहीं हो सकती, वे सदैव सर्वज्ञ होते हैं। उनका समूचा व्यक्तित्व बदल जाएगा और वे सच्चिदानन्द का सान्निध्य बिना किसी बाधा के सीधे प्राप्त कर सकेंगे।

(ग) मूल्यमीमांसा (मूल्य का स्वरूप)

दर्शन की यह शाखा नैतिकता तथा मूल्यों से सम्बन्धित है। श्री अरविन्द के अनुसार, नैतिकता सामाजिक विकास की बहुत ही महत्वपूर्ण विधि है। समाज में प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्तव्यों अथवा कर्मों के माध्यम से अपने मूल्यों को विकसित करता है। किन्तु सभी प्रयास सबकी भलाई की भावनाओं पर आधारित होने चाहिएं।

महात्मा गाँधी की भान्ति श्री अरविन्द का विचार है कि मानवता की सेवा मानवीय दर्शन (Humanistic Philosophy) का आधार है। परमात्मा मानवता के मन्दिर में निवास करते हैं। मनुष्य अपने सहजीवों के कल्याण का कार्य करके ही बड़ा बन सकता है। एक आदर्शवादी की तरह, वे मूल्यों को नित्य मानते हैं, इन्हें आध्यात्मिक विकास के माध्यम से अनुभव किया जा सकता है। इस प्रकार, मूल्य विकासवादी ढंग से विकसित होते हैं। आध्यात्मिक स्तर पर, निस्वार्थ भावनाएँ, समर्पण की भावना, सत्य के लिए प्रेम, सौन्दर्य और श्रेष्ठता, मानव जीवन के चरम उद्देश्य अर्थात् आत्मज्ञान को साकार करना आदि शुरू हो जाता है।

Scanned by CamScanner

द्वितीय अध्याय

श्री अरविन्द का शिक्षा दर्शन

श्री अरविन्द ने अपना सारा जीवन समाज के कल्याण के लिए समर्पित कर दिया। शिक्षा सम्पूर्ण मानव–जाति के लिए, दिव्य पूर्णता की और बढ़ने के नियम और शक्ति, शान्ति, सौन्दर्य और आत्म–ज्ञान के आनन्द को उपलब्ध कराती है। श्री अरविन्द का सुझाव है कि शिक्षा का स्वरूप एक ''पूर्ण प्रक्रिया'' के रूप में पूर्ण दर्शन पर आधारित स्वीकृत होना चाहिए। इस संदर्भ में, मानवजाति के समग्र विकास की प्रक्रिया में, व्यक्ति और समाज दोनों को पूर्णतः स्वीकार करना चाहिए।

(i) आध्यात्मिक स्तर तक शिक्षा की अवधारणा :

श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा की वर्तमान पद्धति का कार्य सम्पादन भारतीय समाज की उभरती हुई आवश्यकताओं के अनुसार नहीं हो रहा है। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि हमारी शिक्षा प्रणाली में बदलाव हुए हैं, पर ये बदलाव बच्चे की मानसिक व आध्यात्मिक आवश्यकताओं तथा राष्ट्र की इच्छाओं के अनुरूप नहीं है।

श्री अरविन्द का यह बहुत सही सुझाव है कि ''शिक्षा सही मायने में कोई कपड़ा बुनने वाली मशीन नहीं, बल्कि मानवीय मन की शक्तियों एवं आत्मा का वास्तविक निर्माण या विकास है।'' इसलिए बच्चे की शिक्षा सर्वश्रेष्ठ बनाने में सहायक, सर्वोत्तम, भावपूर्ण तथा उसकी निज प्रकृति के अनुरूप होनी चाहिए।

(ii) शिक्षा–दर्शन के मूल सिद्धान्त

श्री अरविन्द का शिक्षा–दर्शन निम्नलिखित सिद्धान्तों पर आधारित है:–

i. स्व–अध्ययन पर आधारित छात्र केन्द्रित शिक्षा।
ii. यह सुरक्षात्मक हो, पर स्वाभाविक रूप से संकेतात्मक हो।
iii. शिक्षा, कर्मयोग अथवा स्वधर्म पर आधारित हो।
iv. स्वाभाविक रचनात्मक वातावरण के साथ–साथ प्राकृतिक सौन्दर्य के प्रति उन्मुख हो।
v. शिक्षा शिक्षार्थी की क्षमता के अनुरूप हो।
vi. राष्ट्रीयता की भावना का विकास करने वाली हो।
vii शिक्षा के माध्यम से विविधता में एकता की भावना का विकास हो।

(iii) शिक्षा का उद्देश्य

श्री अरविन्द शिक्षा का एक ऐसा व्यापक उद्देश्य सुझाते है जो कि शिक्षार्थी की प्रकृति के समस्त पहलुओं को समेटे हुए है। जैसा कि श्री अरविन्द बड़े विद्वतापूर्ण ढ़ंग से कहते हैं कि शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य मानव–जाति को अध्यात्म की अधिकतम जानकारी देने वाला होना चाहिए। उनके अनुसार आदि काल से ही न तो शिक्षा और न ही धर्म मनुष्य में परिवर्तन ला पाए हैं। अब समय है जब हमें राष्ट्र कल्याण मानव–विकास के लिए मानव विकास को पूर्ण आध्यात्मिक आधार देना है। उनकी शिक्षा का मुख्य उद्देश्य निम्नांक्ति है:–

(i) बच्चों को सामान्य वैज्ञानिक विचारों तथा अध्यात्म के विषय में जानकारी देना जो कि 21वीं सदी के समसामयिक समाज के अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हो।

Scanned by CamScanner

(ii) आत्मतत्व और जड़तत्व के बीच सम्बन्धों का अवलोकन करने के लिए बच्चों की सहायता करना।

(iii) उन्हें वैज्ञानिक प्रगति के प्रति जागरूक करना, जो कि आध्यात्मिक खोज करने में सहायक होती है।

(iv) मानवीय जीवन में पूर्ण–योग एवं उसके महत्व के प्रति बच्चों में जागरूकता फैलाना।

(v) सम्पूर्ण–शिक्षा की वैज्ञानिक प्रणाली को विकसित करना और समझना तथा आधुनिक समाज के लिए सुदृढ़ आदर्श का निर्माण करना।

(vi) व्यक्तित्व के पाँच पहलुओं–शारीरिक, जैविक, मानसिक, आत्मिक तथा आध्यात्मिक के अभ्यास तथा विकास का वातावरण तैयार करना।

(vii) सभी प्रकार के ज्ञानों की एकता तथा आध्यात्म और विज्ञान को वास्तविक उकता देकर व्यक्ति एवं समाज के लाभ को महत्त्व देने का प्रयास करना।

(viii) मानव जाति में एकता की समझ विकसित करना तथा अन्तराष्ट्रीय शान्ति और समन्वय स्थापित करना कुल मिलाकर हम कह सकते हैं कि विद्यालय का सम्पूर्ण वातावरण ऐसा होना चाहिए। जहाँ पर व्यक्ति की मानसिक, आत्मिक, मूलभूत और आध्यात्मिक जरूरतें पूरी हो सकें।

(iv) पाठ्यक्रम

श्री अरविन्द बहुआयामी पाठ्यक्रम का सुझाव देते हैं। पाठ्यक्रम का उद्देश्य न केवल मानसिक विकास बल्कि शारीरिक, सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक विकास भी होना चाहिए। वह आगे यह भी सुझाव देते हैं कि पाठ्यक्रम को बच्चों के चहुँमुखी विकास के लिए लचीला व अंशों में विभाजित होना चाहिए। विद्यार्थियों को उनके मानसिक स्तर, अभिरूचि और क्षमता के अनुसार विषयों को चुनते में आजादी होनी चाहिए। इसलिए श्री अरविन्द शिक्षार्थीयों के लिए निम्नलिखित विषयों के अध्ययन का सुझाव देते हैं:–

- मानवियकी, भाषाएँ, विज्ञान, इंजीनियरिंग और तकनीकि।
- चित्रकला, संगीत और नृत्य (भारतीय और पाश्चात्य दोनों), नाट्य कला, शिल्प कला, व्यवहारिक पर्यावरण सम्बन्धी जानकारी आदि।
- शारीरिक शिक्षा–खेलकूद, जिमनास्टिक, व्यायाम, तैराकी और मैदानों में खेले जाने वाले खेल।

(V) शिक्षा की विधियाँ

शिक्षण–प्रशिक्षण की प्रक्रिया शिक्षार्थी को विभिन्न परिवर्तनो के प्रति सचेत करती है जो शिक्षण–काल के दौरान प्रभावकारी होते हैं। ये पूरी शिक्षा बिना किसी बाहरी दबाव के सहज भाव से तथा अपने आप चलने वाली होनी चाहिए। इस संदर्भ में श्री अरविन्द निम्नलिखित शिक्षण पद्धति का सुझाव देते हैं जो शिक्षण–प्रशिक्षण के लिए प्रभावकारी है:–

- रटने की प्रवृति के स्थान पर मनोयोग की शक्ति, चित् की एकाग्रता और निर्णय लेने की क्षमता विकसित करनी चाहिएँ।
- विज्ञान की शिक्षा में, निरीक्षण तथा प्रकृति सम्बन्धी अध्ययन विस्तारपूर्वक होना चाहिए।
- वनस्पति विज्ञान के ज्ञान के लिए हमें फूलों, पत्तों, पौधों तथा पेड़ों को आधार बनाकर अध्यन करना चाहिए।

Scanned by CamScanner

- उसी प्रकार से, खगोलशास्त्र सितारों या नक्षत्रों के अवलोकन से, भू–विज्ञान पृथ्वी और पत्थरों आदि के निरीक्षण से, कीटशास्त्र कीट–पतंगों के अध्ययन पर निरीक्षण से, तथा प्राणीशास्त्र को जानवरों के अवलोकन द्वारा सीखा जा सकता है।
- इसके अतिरिक्त बच्चे को उसके आध्यात्मिक सत् की वास्तविक प्रकृति के विषय में जागरूक करना चाहिए।

श्री अरविन्द के अनुसार सीखने का कार्य शिक्षार्थी के लिए उलझन भरा होता है। वह सुझाव देते हैं कि शिक्षार्थी स्वयं के आविष्कार से, स्वयं समझकर और स्वयं अभ्यास करके ही सीख सकता है। शिक्षार्थी के खुद के प्रयास बिना, उसे कोई भी सीखा नहीं सकता। 'पास से दूर' के सिद्धान्त को महत्व देने का उनका अभिप्राय यह है कि शिक्षार्थी की पढ़ाई उसके वर्तमान स्तर से शुरू होकर भविष्य के निर्माण तक चलनी चाहिए

(vi) शिष्य की भूमिका

शिक्षार्थी शिक्षण–प्रक्रिया का केन्द्र–बिन्दु होता है। अतः उस का स्थान शिक्षा–प्रणाली में धुरी (Pivotal) का होता है। श्री अरविन्द यह स्वीकार करते हैं कि प्रत्येक शिक्षार्थी अपनी निश्चित आन्तरिक शक्ति के साथ जन्म लेता है जिनमें सामान्य और कुछ विशेष लक्षण भी समाविष्ट होते हैं। ये स्वाभाविक शक्तियाँ प्रत्येक शिक्षार्थी में अलग–अलग हो सकती हैं। श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षार्थी , शिक्षार्थी को निम्न ढ़ग से महत्व देना चाहिए:

- उनकी आन्तरिक क्षमताओं के अनुरूप ही शिक्षा प्रदान करनी चाहिए।
- उन्हें प्रेम और नम्रता के वातावरण में बढ़ने की अनुमति होनी चाहिए।
- उनमें आध्यात्मिक अनुशासन उत्पन्न करने की आवश्यकता होती है इसके लिए उन्हें आत्म–संयम से परिपूर्ण नियमित जीवन के नेत्तृत्व की जरूरत पड़ती है।
- शिक्षार्थी को समग्र शिक्षा–पद्धति, जो उनकी रूचि और विकास के अनुरूप हो, निरीक्षण और परीक्षण द्वारा प्रतिपादित प्रतिक्रिया को अभिव्यक्त करने की आशा की जा सकती है। इस प्रकार वे आस–पास की वस्तुओं के विषय में ज्ञान प्राप्त करेंगे।
- उनके खाने, सोने, कक्षा में आने और विद्यालय छोड़ने में नियमितता होनी चाहिए।
- शिक्षार्थी अपनी प्रतिक्रियाओं को अपने शारीरिक गठन, शक्ति और सुन्दरता के अनुरूप सुव्यवस्थित करना चाहिए, जो कि स्व–पूर्णता के लिए अत्यन्त आवश्यक है। इसके लिए, स्वेच्छा से वह प्रत्येक प्रकार का सुख जिनमें यौन सुख भी शामिल है, को अस्वीकार कर देता है क्योंकि श्री अरविन्द के अनुसार यौन–सुख सम्बधी प्रत्येक कार्य मृत्यु की ओर कदम रखने के समान है।
- उससे ब्रह्मचर्य जीवन जीने की आशा की जाए जिसके परिणाम स्वरूप उसकी ऊर्जा का प्रतिस्थापन प्रगति और सम्पूर्ण परिवर्तन के लिए विभिन्न ऊर्जाओं में होता है।
- शिक्षार्थी को यह सीखाना होगा कि वह अपने अन्दर बिना नफरत या नाराजगी के प्रत्येक संघर्ष को झेलने की क्षमता कैसे उत्पन्न करे।
- शिक्षार्थी को सुयोग्य और वीरतापूर्ण दिखाई देने वाले उच्च स्तरीय जीवन के निर्माण की भी जानकारी देनी होगी, जो देश व मानव–जाति के प्रति समर्पित हो।

Scanned by CamScanner

(vii) शिक्षक को योगदान

प्राचीन भारतीय शिक्षा–पद्धति की भाँति श्री अरविन्द शिक्षक की भूमिका को बहुत ही महत्वपूर्ण मानते हैं परन्तु प्राचीन भारतीय योजना के अनुसार नहीं। शिक्षार्थी बहुत शिक्षा में केन्द्रीय स्थान रखता है। उनके शैक्षिक दर्शन के अनुसार, शिक्षक एक ज्ञानी तथा पथ–प्रदर्शक होता है। गुरू पूर्ण अधिकारी नहीं होता। वह अपने विचार थोपता नहीं या शिक्षार्थी से निष्क्रिय समर्पण की माँग नहीं करता। वह ऐसा वातावरण उत्पन्न करता है जिससे शिक्षार्थी स्वंतत्र रूप से आगे बढ़ सके। शिक्षार्थी का कार्य प्रशिक्षक का नहीं वरन् एक सहायक या पथ–प्रदर्शक का होता है। वास्तव में वह शिक्षार्थी को शिक्षित नहीं करता बल्कि वह उसका की स्वयं सीखने में, उसके बौद्धिक विकास में, नैतिकता, सौन्दर्य और व्यवहारिक सामर्थ्य तथा उसके सहज विकास में सहायता करता है।

बच्चे में थोड़ी बहुत दिव्यता विद्यमान होती है और शिक्षक का कार्य उस दिव्य शक्ति को ढूढ़ने, विकसित करने तथा उसे प्रयोग करने में उसकी सहायता करने का होता है। शिक्षक को चाहिए कि वह उसमें अन्तर्निहित शक्ति को प्रदीप्त कर आत्म विकास करने में उसकी सहायता करे तथा उसे परिपूर्ण बनाए। उसकी मुश्किल, जरूरत या सहायता के समय शिक्षक उसके लिए मित्र,ज्ञानी और पथ–प्रदर्शक होता है। शिक्षक अपने शिष्यों से अपनी विद्वता और चारित्रिक गुणों के बल पर आदर व सम्मान प्राप्त करता है। उसके अवगुण, हीनता और दोष बढ़ते हुए बच्चे के व्यक्तित्व पर बहुत बुरा प्रभाव डाल सकते हैं। इसलिए शिक्षक को अपनी सीमाओं तथा कार्यो के प्रति सचेत रहना चाहिए। वह अपनी साहसिक खोजों, आत्म ज्ञान और मानवता की सामूहिक स्वतन्त्रता में सहायक के रूप में विद्यार्थी को अपने साथ रखता है और प्रभाव और उदाहरण से, उपस्थिति तथा सहायक प्रवृति के द्वारा शिक्षा देता है, न कि कठोर सिद्धान्तों तथा मानक नियमों के द्वारा।

(viii) स्वतन्त्रता और अनुशासन

श्री माँ स्पष्ट रूप से कहती हैं, ''बिना अनुशासन के कोई बड़ी रचना सम्भव नहीं होती।'' सर्वोच्च सिद्धान्त के संदर्भ में अनुशासन को परिभाषित करते हुए श्री अरविन्द यह स्वीकार करते हैं कि ''सत्य–पथ पर चलना, या नियम का पालन करना या कर्म–सिद्धांत के अनुसार कार्य करना या उच्च शक्ति का आज्ञापालन करना ही अनुशासन कहलाता है।'' इस प्रकार, अनुशासन एक नियन्त्रित जीवन है। शारीरिक, जैविक और मानसिक स्रोत्र, आध्यात्मिकता के माध्यम से ही निर्देशित होते हैं। यह कल्पनाओं की निरंकुश आसक्ति, आवेशों तथा इच्छाओं के विरूद्ध है। यह स्वानुशासन है । अंशतः यह अन्तःशक्ति के प्रति आज्ञापालन भी है।

शिक्षार्थी को स्व–अनुशासन के माध्यम से अपनी आन्तरिक शक्ति के विषय में जागरूक होने की आवश्यकता होती है। ऐसे समय में, स्वतंत्रता उसकी आत्मा का सम्पूर्ण हिस्सा बन जाती है। शिक्षा का अंतिम उद्देश्य किसी व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतन्त्रता और अनुशासन के माध्यम से आध्यात्मिक चेतना को प्राप्त करना है। शिक्षक की भूमिका, उनकी क्षमताओं के अनुरूप वैज्ञानिक अभिवृति की प्रक्रिया और उनकी योग्यताओं के प्रति जागरूक करना है। शिक्षक का परम उद्देश्य, शिक्षार्थी की मानवीय चेतना को आध्यात्मिक स्तर तक पहुंचाना तथा विचार और व्यवहार द्वारा उसके जीवन को आध्यात्मिकता प्रदान करता है।

Scanned by CamScanner

सारांश

श्री अरविन्द की शिक्षा पद्धति आधुनिक भारतीय संदर्भ में राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली के विकास के लिए एक मजबूत आधार प्रदान करती है। यह पद्धति न सिर्फ भारतीयता को अभिव्यक्त करती है बल्कि समसमायिक वैश्विक मूल्यों को भी प्रकाशित करता है। उनका शिक्षा–दर्शन भौतिकवाद और अध्यात्मवाद, आदर्शवाद, यथार्थवाद, व्यक्तिवाद और समाजवाद का सम्मिश्रण है। यह कहना उचित ही होगा कि 21 वीं सदी विज्ञान और आध्यात्मिकता के समस्त अवयवों से मुखरित होगी।

Scanned by CamScanner

स्वपरीक्षणीय प्रश्न

प्रश्न1. श्री अरविन्द के तत्व–दर्शन में 'जड़तत्त्व' और 'आत्म तत्त्व' के बीच क्या सम्बन्ध हैं?

प्रश्न2. श्री अरविन्द द्वारा प्रतिपादित आठ सिद्धान्तों या सता के विभिन्न स्तरों को उल्लेखित करें?

प्रश्न3. श्री अरविन्द के अनुसार सत्+चित्+आनन्द (सच्चिदानन्द) की वास्तविकता क्या है उनकी अँग्रेजी की तीन समरूपताए बताइए?

प्रश्न4. श्री अरविन्द के दर्शन में, श्री माँ के चार रूप क्या है?

प्रश्न5. 'कर्म' और 'पुनर्जन्म' के बीच सम्बन्धों का विवरण दीजिए।

प्रश्न6. श्री अरविन्द की ज्ञानमीमांसा के अनुसार अज्ञान के सात प्रकारों का वर्णन करें?

प्रश्न 7. अवतरण और विकास में क्या अन्तर है?

प्रश्न8. श्री अरविन्द के अनुसार जीवन के पाँच महत्वपूर्ण मूल्यों की तालिका बनाएँ?

प्रश्न9. श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा की अवधारणा क्या है?

प्रश्न10. श्री अरविन्द के शिक्षा दर्शन के पाँच महत्वपूर्ण तथ्यों (Salient Features) का वर्णन करें?

प्रश्न11. समग्र–शिक्षा के तीन उद्देश्यों के विषय में बताएँ

प्रश्न12. समग्र–शिक्षा में अध्यापन के चार सिद्धान्तों को प्रकाशित करें?

प्रश्न13. शिक्षक और शिक्षार्थी के बीच सम्बन्धों की मुख्य विशेषताओं का वर्णन करें?

Scanned by CamScanner

संन्दर्भ–ग्रन्थ सूची

अरविन्दो, एस0 (1946) द रिडल ऑफ द वर्ल्ड; श्री अरविन्दो आश्रम, पाँडीचेरी।

अरविन्दो, एस0 (1949) एसेज ऑन द गीता; सेकण्ड सिरीज, आर्य पब्लिशिंग हाऊस, कलकता।

अरविन्दो, एस0 (1950) द ह्युमन साइकल, द श्री अरविन्दो लाईब्रेरी, इंक0 न्यूयार्क।

अरविन्दो, एस0 (1950) अरविन्दो साइकल, बम्बई, सेकण्ड सिरीज।

अरविन्दो, एस0 (1950) अरविन्दो सर्कल, बम्बई, फोर्थ सिरीज।

अरविन्दो, एस0 (1952) द सुपरामेण्टल मैनीफेस्टेशन, द श्री अरविन्दो आश्रम, पाँडीचेरी

अरविन्दो, एस0 (1952) इन्टेग्रल एजुकेशन, कम्पाइल्ड बाई डॉ0 इन्दिरा सेन, श्री अरविन्दो इन्टरनेशनल युनिवर्सिटी सेन्टर, पाँडीचेरी।

कपिल शास्त्री, टी0वी0 (1966) श्री अरविन्दो : लाईट ऑन टीचिंग, श्री अरविन्दो लाईब्रेरी, मद्रास।

रोरकी जे0 (2001) द ट्रू टीचर, श्री अरविन्दो आश्रम प्रैस, पाँडीचेरी, पेज0 42–43

शर्मा, आर0 एन0 (2000) इन्टेग्रल थॉट ऑफ श्री अरविन्दो, सुभी पब्लिकेशन्स, एफ0 के0 30, शास्त्री नगर, दिल्ली–52

शर्मा, आर0 एन0 (1964) श्री अरविन्दो' ज इन्टेग्रल मेथड इन फिलॉसफी, आगरा युनिवर्सिटी, जे0 रेज0 (लेटरस) वोल्यूम XI, पेट्रन II.

Scanned by CamScanner

श्री अरविन्द अध्ययन केन्द्र

सोहन लाल डी० ए० वी० शिक्षण महाविद्यालय

अम्बाला शहर-134003 (हरियाणा)

Website : www.sldaveducation.org
http://csassldav.webs.com
E-mail: sldaveducation@gmail.com
Phone No.: 0171-2444437, 2446584
Fax : 0171-2446584

Scanned by CamScanner